

10-नवसृजन के निमित्त महाकाल की तैयारी

अध्याय 1: अनौचित्य का प्रतिकार

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक के अनुसार, स्रष्टा कब अनौचित्य को सीमा से बाहर नहीं बढ़ने देता?

उत्तर: जब अनाचारी अपनी दुष्टता नहीं छोड़ते और पीड़ित लोग उसका प्रतिकार करने के लिए तैयार नहीं होते, तब स्रष्टा का आक्रोश उभरता है और वह अनौचित्य को सीमा से बाहर नहीं बढ़ने देता।

2. प्रश्न: दुष्ट-चिन्तन और भ्रष्ट आचरण की तुलना किससे की गई है?

उत्तर: दुष्ट-चिन्तन और भ्रष्ट आचरण की तुलना पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से की गई है, जो हर वस्तु को नीचे की ओर खींचती है, और पानी के बहाव से की गई है, जो बिना प्रयास के नीचे की ओर बहता है।

3. प्रश्न: पिछले दो हजार वर्षों को "अन्धकारकाल" क्यों कहा गया है?

उत्तर: पिछले दो हजार वर्षों को "अन्धकारकाल" इसलिए कहा गया है क्योंकि इस अवधि में समर्थों ने असमर्थों को बहुत कष्ट दिया और अनीति-अनाचार ने अपनी सभी मर्यादाओं का उल्लंघन किया।

4. प्रश्न: मनुष्य की विशिष्टता क्या है?

उत्तर: मनुष्य की विशिष्टता यह है कि वह अनीति से जीत भले ही न सके, पर उससे टक्कर ले सकता है। संकटों से जूझने की यह शाश्वत सामर्थ्य ही उसकी विशिष्टता है।

5. प्रश्न: अवतार-परम्परा किसे कहते हैं?

उत्तर: जब संसार में गलतियाँ दोनों ओर से (अनाचार करने वाले और उसे सहने वाले) होने लगती हैं और व्यवस्था लड़खड़ा जाती है, तब स्रष्टा स्वयं संतुलन स्थापित करने के लिए बागडोर अपने हाथ में लेता है, जिसे अवतार-परम्परा कहते हैं।

6. प्रश्न: हमारे समय की सबसे बड़ी गुत्थी क्या है?

उत्तर: हमारे समय की सबसे बड़ी गुत्थी यह है कि ज्ञान-विज्ञान और सुविधा-साधनों की अधिकता होने के बावजूद, हर व्यक्ति खिन्न, उद्विग्न और विपन्न है, जिसका कारण उपलब्ध साधनों का सदुपयोग न हो पाना है।

7. प्रश्न: आज के समय में मनुष्य क्यों दुखी है?

उत्तर: आज के समय में मनुष्य अपनी उपलब्धियों, जैसे समय, श्रम, मनोयोग आदि का दुरुपयोग करने के कारण दुखी है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: स्रष्टा का आक्रोश कब और क्यों उभरता है?

उत्तर: स्रष्टा का आक्रोश तब उभरता है जब अनाचारी अपनी दुष्ट गतिविधियाँ नहीं छोड़ते और पीड़ित व्यक्ति

कायरता अपनाकर उसे रोकने के लिए कटिबद्ध नहीं होते। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि स्रष्टा ने संसार में यह विधान भी बनाया है कि सताए जाने वाले हार-जीत का विचार किए बिना प्रतिकार के लिए तैयार रहें। जब दोनों ही पक्ष (अत्याचारी और पीड़ित) अपनी भूमिका सही ढंग से नहीं निभाते, तो सृष्टि की व्यवस्था लड़खड़ाने लगती है, जिसे देखकर स्रष्टा को क्रोध आता है।

2. प्रश्न: "अनीति को निर्बाध चलने देने या उसे सहते रहने के स्थान पर उससे टकराते हुए मानवीय गरिमा को जगाना भी तो जरूरी है।" इस कथन का क्या आशय है?

उत्तर: इस कथन का आशय है कि मनुष्य का कर्तव्य केवल अनीति सहना नहीं है। भले ही वह अनीति पर विजय प्राप्त न कर सके, लेकिन उसका विरोध करना, उससे टक्कर लेना आवश्यक है। ऐसा करने से मनुष्य की आत्म-सम्मान और गरिमा जागृत होती है। दया और क्षमा के नाम पर अनीति को बढ़ावा देना अवांछनीय है और अनीति का प्रतिकार करना मानवीय गरिमा से जुड़ा हुआ है।

3. प्रश्न: लेखक के अनुसार, ज्ञान और विज्ञान का सदुपयोग और दुरुपयोग क्या है और इसके क्या परिणाम होते हैं?

उत्तर: लेखक के अनुसार, ज्ञान और विज्ञान का सदुपयोग तब होता है जब उसे नीतिमत्ता के साथ नियोजित किया जाए। इससे हर वस्तु सुखद और श्रेयस्कर बन जाती है। इसके विपरीत, जब दुर्बुद्धि अपनाकर इसका दुरुपयोग किया जाता है, तो इसके दुष्परिणाम भुगतने पड़ते हैं। मनुष्य पुरुषार्थ करते हुए भी असन्तुष्ट और दीन-हीन बना रहता है, जैसा कि आजकल हो रहा है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: स्रष्टा के "यदा-यदा हि धर्मस्य" वाले वचन का निर्वाह करने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? वर्तमान संदर्भ में इसकी व्याख्या करें।

उत्तर: स्रष्टा को अपने इस वचन का निर्वाह करने की आवश्यकता तब पड़ती है जब मानवीय प्रयास असंतुलन को ठीक करने में विफल हो जाते हैं। जब अत्याचारी अपनी दुष्टता और पीड़ित अपनी कायरता नहीं छोड़ते, तब धर्म की हानि होती है और सृष्टि की व्यवस्था बिगड़ जाती है। वर्तमान संदर्भ में, ज्ञान और विज्ञान की अभूतपूर्व प्रगति के बावजूद मनुष्य दुखी और परेशान है क्योंकि वह उपलब्ध साधनों का सदुपयोग नहीं कर पा रहा है। यह एक प्रकार का असंतुलन है। इस स्थिति को ठीक करने के लिए, स्रष्टा को हस्तक्षेप करना पड़ता है ताकि मनुष्य को सही मार्ग दिखाया जा सके और संतुलन पुनः स्थापित हो।

2. प्रश्न: क्या अनीति करने वाला और उसे चुपचाप सहने वाला, दोनों समान रूप से दोषी हैं? पाठ के आधार पर तर्कपूर्ण उत्तर दें।

उत्तर: हाँ, पाठ के अनुसार, अनीति करने वाला और उसे सहने वाला, दोनों ही दोषी हैं। स्रष्टा को दोनों पर ही

क्रोध आता है। अनाचारी अपनी दुष्टता के कारण दोषी है, जबकि पीड़ित व्यक्ति प्रतिकार न करके अपनी कायरता, भीरुता और कर्तव्यहीनता के कारण दोषी है। अनीति का प्रतिकार करना मानवीय गरिमा का अंग माना गया है। चुपचाप अन्याय सहना भी एक प्रकार से अनीति को बढ़ावा देना है, जिससे सृष्टि का संतुलन बिगड़ता है। इसलिए, स्रष्टा की दृष्टि में दोनों ही अपनी-अपनी भूमिका निभाने में असफल रहते हैं।

अध्याय 2: दण्ड भी और प्यार भी

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: पिछले दिनों ज्ञान और विज्ञान की शक्ति का उपयोग कैसे किया गया?

उत्तर: पिछले दिनों ज्ञान और विज्ञान की शक्ति का दुरुपयोग युद्धोन्माद को पूरा करने, जल्दी से जल्दी धन बटोरने, छल-छद्म करने और दुर्बलों का शोषण करने के लिए किया गया।

2. प्रश्न: विज्ञान की शक्ति के दुरुपयोग का क्या प्रतिफल हुआ?

उत्तर: विज्ञान के दुरुपयोग के फलस्वरूप सर्वत्र प्रदूषण फैल गया, शक्तिशाली लोग निर्भय होकर अनाचार करने लगे और औचित्य की मर्यादाओं को भुला दिया गया।

3. प्रश्न: "क्रिया की प्रतिक्रिया" का नियम क्यों आवश्यक है?

उत्तर: "क्रिया की प्रतिक्रिया" का नियम इसलिए आवश्यक है क्योंकि इसके बिना संसार में अन्धेर मच जाएगा, न्याय का अस्तित्व नहीं रहेगा, कोई पाप से नहीं डरेगा और हर कोई अनीति करने के लिए आतुर हो जाएगा।

4. प्रश्न: 'सतयुग' किसे कहा गया है?

उत्तर: जब मनुष्य सही चाल, सही गति और सही रीति-नीति अपनाता था, प्रगति में संतुलन था, मनुष्यों में स्नेह-सहयोग था और प्रकृति अनुकूल थी, उस संतुलित अवसर को 'सतयुग' कहा गया है।

5. प्रश्न: लोग नशेबाजी और विलासिता का आश्रय क्यों लेते हैं?

उत्तर: आपा-धापी और छीना-झपटी के कारण उत्पन्न हुए कलह और उद्विग्नता से परेशान होकर लोग अपना गम गलत करने के लिए नशेबाजी और विलासिता का आश्रय लेते हैं।

6. प्रश्न: स्रष्टा कब कठोरता अपनाता है?

उत्तर: जब मर्यादा का उल्लंघन चरम सीमा पर पहुँच जाता है और लोग विवेक खोकर अनाचार पर उतारू हो जाते हैं, तब उन्हें काबू में लाने के लिए स्रष्टा कठोरता अपनाता है।

7. प्रश्न: न्यायकारी या स्रष्टा अपनी रीति-नीति कब बदल लेता है?

उत्तर: जब लोग अपनी उद्विग्नता से बाज आ जाते हैं और सुधरना आरम्भ कर देते हैं, तब स्रष्टा का उद्देश्य पूरा हो जाता है और वह धमकाने के स्थान पर प्यार करने की रीति-नीति अपना लेता है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: लेखक ने वर्तमान परिस्थितियों की तुलना स्कूल में अनुशासन बिगाड़ने वाले लड़कों से कैसे की है?

उत्तर: लेखक ने वर्तमान परिस्थितियों की तुलना स्कूल में अनुशासन बिगाड़ने वाले लड़कों से की है। जैसे जब लड़के स्कूल में अवांछनीय धमा-चौकड़ी मचाते हैं तो शिक्षक को कड़ा अनुशासन अपनाना पड़ता है, उसी प्रकार जब व्यक्ति और समाज उद्दण्डता भरा अनाचार करने लगते हैं तो प्रकृति भी अपना हंटर चलाती है। आज व्यक्ति और समाज को जो खिन्नता और विपन्नता का त्रास सहना पड़ रहा है, वह प्रकृति द्वारा दिया जा रहा दण्ड ही है।

2. प्रश्न: स्रष्टा की दण्ड-व्यवस्था को "निर्दयतापूर्ण" क्यों कहा जा सकता है, फिर भी यह आवश्यक क्यों है?

उत्तर: स्रष्टा की दण्ड-व्यवस्था को निर्दयतापूर्ण इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि इसमें मनुष्य को कष्ट और प्रताड़ना सहनी पड़ती है, जैसे कि पिछले युद्धों में हुई अपार धन-जन की हानि और प्रदूषण। फिर भी यह आवश्यक है क्योंकि यह व्यवस्था का अंग है। यदि उल्टी चाल चलने वाले को कड़ाई से सीधा चलने के लिए बाध्य न किया जाए, तो सृष्टि का सुनियोजन संभव नहीं हो सकेगा। यह दण्ड लोगों को यह समझाने के लिए आवश्यक है कि सही रास्ते से हटने के कितने भयंकर परिणाम हो सकते हैं।

3. प्रश्न: "शक्ति का सदुपयोग सज्जनों से ही बन पड़ता है।" इस कथन को अध्याय के आधार पर स्पष्ट करें।

उत्तर: इस कथन का अर्थ है कि केवल सज्जन व्यक्ति ही शक्ति का सही उपयोग कर सकते हैं, जबकि दुर्जन हमेशा उसका दुरुपयोग करते हैं। अध्याय बताता है कि पिछले दिनों मनुष्य को ज्ञान और विज्ञान से जो शक्ति मिली, उसका दुरुपयोग ही हुआ। उसे युद्ध, शोषण, और छल-कपट में लगाया गया, जिससे प्रदूषण, अपराध और अशांति जैसे भयानक परिणाम सामने आए। यदि यही शक्ति सज्जनों के हाथ में होती तो वे इसका उपयोग लोक-कल्याण और सृष्टि को सुरम्य बनाने के लिए करते, जैसा कि सतयुग में होता था।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: क्या स्रष्टा का उद्देश्य केवल दण्ड देना है? "दण्ड भी और प्यार भी" शीर्षक के आलोक में स्रष्टा के दोहरे दृष्टिकोण का विश्लेषण करें।

उत्तर: नहीं, स्रष्टा का उद्देश्य केवल दण्ड देना नहीं, बल्कि सुव्यवस्था बनाना है। "दण्ड भी और प्यार भी" शीर्षक स्रष्टा के दोहरे दृष्टिकोण को दर्शाता है। एक ओर, वह उद्दण्डता और अनाचार के प्रति कठोरता अपनाकर दण्ड देता है, ताकि बिगड़ी हुई व्यवस्था को पटरी पर लाया जा सके। यह उसका 'महाकाल' स्वरूप है। दूसरी ओर, जब व्यक्ति या समाज सुधरने लगता है और सही मार्ग अपना लेता है, तो स्रष्टा अपनी नीति बदलकर प्यार और करुणा का व्यवहार करता है। ठीक वैसे ही जैसे एक अभिभावक गलती करने पर बच्चे को डांटता है और सुधर जाने पर उसे पुचकारता है। अतः, दण्ड और प्यार दोनों ही सुव्यवस्था स्थापित करने के

साधन हैं, साध्य नहीं।

2. प्रश्न: मनुष्य को सृष्टि में एक "संरक्षक" और "माली" की भूमिका सौंपी गई थी, लेकिन वह इसमें कैसे विफल हुआ? इसके क्या दूरगामी परिणाम हुए?

उत्तर: मनुष्य को यह सृष्टि एक सुरम्य उद्यान के रूप में सौंपी गई थी और उसकी भूमिका एक संरक्षक और माली की थी, जिसका काम इसकी अभिवृद्धि करना था। लेकिन वह इसमें तब विफल हुआ जब उसने अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके सृष्टि की व्यवस्था को ही उलटना शुरू कर दिया। उसने प्रकृति का शोषण किया, प्रदूषण फैलाया, युद्धों में घातक हथियारों का प्रयोग किया और आपसी स्नेह-सहयोग को भुला दिया। इसके दूरगामी परिणाम बहुत भयंकर हुए—शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य गड़बड़ा गया, अपराध बढ़ गए, हर कोई आशंकित और आतंकित रहने लगा, और सुख-शांति का वातावरण नष्ट हो गया। सतयुग जैसी संतुलित स्थिति कलियुग जैसी असंतुलित स्थिति में बदल गई।

अध्याय 3: युगसन्धि के अगले दिन

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: समझदार अध्यापक अपने विद्यार्थियों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं?

उत्तर: समझदार अध्यापक सभी विद्यार्थियों का हित चाहते हैं, लेकिन परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग व्यवहार करते हैं। वे उद्दण्ड विद्यार्थियों के प्रति नाराजी और प्रताड़ना का व्यवहार करते हैं, जबकि अनुशासित विद्यार्थियों को उपहार देते हैं।

2. प्रश्न: नियन्ता ने परिस्थितियों के अनुरूप व्यवहार करने के लिए कौन से दो माध्यम अपने हाथ में रखे हैं?

उत्तर: नियन्ता ने दो माध्यम अपने हाथ में रखे हैं: पहला, महाकाल द्वारा दण्ड-प्रक्रिया (नरक का त्रास) और दूसरा, सुखद सम्भावनाएँ (स्वर्ग-सुख)।

3. प्रश्न: 'कलियुग' जैसी परिस्थितियाँ कब बनती हैं?

उत्तर: जब समाज में अनाचार का प्रचलन बढ़ जाता है, तब 'कलियुग' जैसी परिस्थितियाँ बनती हैं।

4. प्रश्न: अनीति के दौर में कौन-कौन पाप का भागीदार माना जाता है?

उत्तर: अनीति करने वाला, अन्याय के सामने सिर झुकाने वाला (उसे सहने वाला), और सब कुछ समझते हुए भी दूर से देखता रहने वाला (प्रतिरोध न करने वाला), तीनों ही पाप के भागीदार माने जाते हैं।

5. प्रश्न: युगसन्धि के दस वर्षों (1990-2000) की स्थिति की तुलना किससे की गई है?

उत्तर: युगसन्धि के इन दस वर्षों की स्थिति की तुलना प्रसव-काल से की गई है, जिसमें एक ओर असह्य कष्ट होता है और दूसरी ओर संतान प्राप्ति की सुन्दर सम्भावना की पुलकन भी होती है।

6. प्रश्न: युगसन्धि काल में मनुष्य क्या सीखेगा?

उत्तर: युगसन्धि काल में मनुष्य शान्ति और सौजन्य के मार्ग पर चलना सीखेगा, कर्मफल की प्रक्रिया से अवगत होगा और वह करेगा जो उसे करना चाहिए।

7. प्रश्न: अनीति को मूकदर्शक बनकर देखने वाले लोग क्यों दोषी माने जाते हैं?

उत्तर: वे अपनी कर्तव्यहीनता, असामाजिकता और कायरता के कारण दोषी माने जाते हैं, भले ही उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से कोई दुष्कर्म न किया हो।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: युगसन्धि के समय को "दोहरी भूमिकाओं से भरा हुआ" क्यों कहा गया है? विस्तार से समझाएँ।

उत्तर: युगसन्धि के समय को "दोहरी भूमिकाओं से भरा हुआ" इसलिए कहा गया है क्योंकि इसमें एक साथ विनाश और सृजन, दोनों प्रक्रियाएँ चलेंगी। एक ओर, पिछले दो हजार वर्षों में की गई अनीति और गलतियों के दण्ड के रूप में लोगों को व्यक्तिगत, सामाजिक और प्राकृतिक स्तर पर अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। यह विनाश का पक्ष है। दूसरी ओर, इसी समय में सुन्दर भविष्य की सम्भावनाएँ भी अवतरित होंगी। यह एक ऐसा माहौल बनाएगा जिसमें मनुष्य सही मार्ग पर चलना सीखेगा। यह सृजन का पक्ष है। प्रसव-पीड़ा और शिशु-जन्म की खुशी की तरह, यह दोनों अनुभव एक साथ चलेंगे।

2. प्रश्न: लेखक के अनुसार, कर्म का प्रतिफल मिलने में देर क्यों हो सकती है? उदाहरण सहित स्पष्ट करें।

उत्तर: लेखक के अनुसार, कर्म का प्रतिफल मिलने में देर हो सकती है क्योंकि क्रिया और उसकी प्रतिक्रिया के बीच समय का अंतराल हो सकता है। इसे समझाने के लिए लेखक ने उदाहरण दिए हैं: जैसे आज का दूध कल दही बनता है, और आज बोया गया बीज कुछ दिनों बाद अंकुरित होता है और वृक्ष बनने में तो और भी अधिक समय लग जाता है। इसी प्रकार, पिछली दो सहस्राब्दियों में जो अनाचार के बीज बोए गए, उनका फल (सर्वत्र असंतोष और विग्रह) अब भयंकर रूप में सामने आ रहा है।

3. प्रश्न: भगवान तीनों प्रकार के लोगों (अन्याय करने वाले, सहने वाले और मूकदर्शक) पर क्यों नाराज होते हैं?

उत्तर: भगवान तीनों पर इसलिए नाराज होते हैं क्योंकि ये तीनों ही सृष्टि के संतुलन को बिगाड़ते हैं। अन्याय करने वाला सक्रिय रूप से व्यवस्था को नष्ट करता है। अन्याय सहने वाला अपनी कायरता से अन्याय को बढ़ावा देता है और अपने मानवीय कर्तव्य से मुँह मोड़ता है। वहीं, मूकदर्शक अपनी गैर-जिम्मेदारी दिखाता है; बिगड़ते को बिगड़ने देना भी एक प्रकार का अपराध है क्योंकि वह प्रतिरोध का प्रयास नहीं करता। भगवान का स्वभाव सँभालने का है, बिगाड़ को देखते रहने का नहीं, इसलिए वे इन तीनों से नाराज होते हैं।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: "मनुष्य आपस में धोखेबाजी कर सकता है, पर स्रष्टा के नियम-विधान को झुठलाया नहीं जा सकता।"

इस कथन का युगसन्धि के संदर्भ में विश्लेषण करें।

उत्तर: इस कथन का युगसन्धि के संदर्भ में गहरा अर्थ है। इसका मतलब है कि मनुष्य अपनी चालाकी से अस्थायी रूप से दूसरों को या खुद को धोखा दे सकता है, लेकिन वह कर्मफल के सार्वभौमिक नियम ("जैसी करनी, वैसी भरनी") से बच नहीं सकता। युगसन्धि का काल इसी नियम को चरितार्थ करने का समय है। पिछले दो हजार वर्षों से मनुष्य ने जो अनीति, शोषण और प्रकृति का विनाश किया है, वह स्रष्टा के विधान का उल्लंघन है। अब युगसन्धि के दौर में उन कर्मों का फल कठिनाइयों और प्राकृतिक आपदाओं के रूप में सामने आ रहा है। यह इस बात का प्रमाण है कि भले ही मनुष्य कुछ समय के लिए अपने दुष्कर्मों के परिणामों से बचता हुआ दिखे, अंततः स्रष्टा का न्याय अटल है और उसे झुठलाया नहीं जा सकता।

2. प्रश्न: प्रसव-पीड़ा का रूपक युग-परिवर्तन की प्रक्रिया को कैसे सटीक रूप से समझाता है? इसके सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों पहलुओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर: प्रसव-पीड़ा का रूपक युग-परिवर्तन की प्रक्रिया को बहुत सटीक ढंग से समझाता है क्योंकि यह विनाश और सृजन के एक साथ होने की प्रक्रिया को दर्शाता है।

◦ **नकारात्मक पहलू (पीड़ा):** जैसे प्रसव के समय प्रसूता को असहनीय पीड़ा होती है, वैसे ही युग-परिवर्तन के समय पुरानी, गलत व्यवस्थाओं के टूटने, अनाचार के दण्ड और सामाजिक उथल-पुथल के कारण मानवता को भारी कष्ट सहना पड़ेगा। यह संघर्ष, विग्रह और कठिनाइयों का दौर होगा।

◦ **सकारात्मक पहलू (सृजन):** जैसे पीड़ा के बाद एक नई संतान के जन्म की खुशी और सुन्दर संभावना होती है, वैसे ही इस कष्ट और उथल-पुथल के बाद एक नए, बेहतर युग (सतयुग) का उदय होगा। यह शांति, सौजन्य और सही जीवन-मूल्यों का युग होगा। यह रूपक सिखाता है कि महान सृजन से पहले **intense (तीव्र)** पीड़ा और संघर्ष आवश्यक है, और वर्तमान कष्ट भविष्य के सुन्दर निर्माण की तैयारी है।

अध्याय 4: बुद्धिसंगत प्रतिपादनों की स्वीकृति

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक के अनुसार, इक्कीसवीं सदी को किस नाम से जाना गया है और क्यों?

उत्तर: इक्कीसवीं सदी को "सुधार की शताब्दी" के नाम से जाना गया है क्योंकि इसमें बहुत तेजी से सुधार होने की संभावना है, जितना सामान्य गति से कई शताब्दियों में होता।

2. प्रश्न: हजारों वर्षों से चली आ रही अनीतियों को कम समय में सुधारने का अवसर क्यों मिल रहा है?

उत्तर: यह नियन्ता की विशेष व्यवस्था का चमत्कार है, जिसमें उद्दण्डों को पूरे दण्ड की जगह केवल डरा-धमकाकर ही सही रास्ते पर चलाने का प्रबंध बन पड़ रहा है।

3. प्रश्न: लेखक के अनुसार, हजार समस्याओं का एक कारण क्या है?

उत्तर: उल्टी समझ ही हजार समस्याओं का एक कारण है।

4. प्रश्न: इन दिनों लोगों में कौन सी हवा चली है?

उत्तर: इन दिनों यह हवा चली है कि लोग सोचने लगे हैं कि दुर्बुद्धि का त्याग किया जाए, दुष्टता छोड़ी जाए और सज्जनों जैसी रीति-नीति अपनाई जाए।

5. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज में प्रशिक्षण की क्या विशेष व्यवस्था है?

उत्तर: शान्तिकुञ्ज में नवयुग के अनुरूप प्रशिक्षण की व्यवस्था है, जहाँ लगभग दो हजार शिक्षार्थियों को नियमित रूप से निःशुल्क भोजन और आवास मिलता है ताकि गरीब-अमीर में भेद न रहे।

6. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज का पाँच दिन का प्रशिक्षण क्यों प्रभावशाली है?

उत्तर: क्योंकि यहाँ जो कहा-सुना जाता है, उसमें असाधारण प्राण जुड़ा होता है, इसलिए वह थोड़े समय में ही व्यक्ति के अन्तराल में स्थायी स्थान बना लेता है और व्यवहार में उतर जाता है।

7. प्रश्न: लोग घिसी-पिटी बातों को आसानी से क्यों स्वीकार कर लेते हैं?

उत्तर: लोग घिसी-पिटी बातों को आसानी से इसलिए स्वीकार कर लेते हैं क्योंकि उन्हें समझने में मस्तिष्क पर दबाव नहीं पड़ता और उनमें कोई विरोध का झंझट भी नहीं होता।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: बीसवीं सदी के अंत और इक्कीसवीं सदी की शुरुआत को लेखक ने एक "सुयोग" क्यों कहा है?

उत्तर: लेखक ने इसे "सुयोग" इसलिए कहा है क्योंकि इस समय लम्बे समय से चल रही गलतियाँ तेजी से सुधर रही हैं। जो गुत्थी लंबे समय से हल नहीं हो रही थी, अब भूल का पता लग जाने से उसका समाधान जल्दी निकल रहा है। लोगों में समझदारी तेजी से वापस लौट रही है और वे भलमनसाहत की रीति-नीति को ही उचित मानने लगे हैं, जो कि एक सकारात्मक और दुर्लभ अवसर है।

2. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज के प्रशिक्षण और सामान्य धार्मिक प्रवचनों में क्या मौलिक अंतर है?

उत्तर: मौलिक अंतर "प्राणशक्ति" और प्रभाव की स्थायित्व का है। सामान्य धार्मिक प्रवचनों में लोग केवल वाणी का रस लेते हैं और जानकारी मस्तिष्क तक पहुँचकर अक्सर विस्मृत हो जाती है। जबकि शान्तिकुञ्ज के प्रशिक्षण में वाणी के साथ असाधारण प्राण जुड़ा होता है, जो श्रोता के अन्तराल में गहराई तक उतरकर स्थायी प्रभाव छोड़ता है और उसके व्यवहार में परिवर्तन लाता है। पाँच दिन का सत्संग पाँच वर्ष की साधना जितना प्रभावकारी सिद्ध होता है।

3. प्रश्न: युग-धर्म को स्वीकारने में सामान्यतः क्या कठिनाइयाँ आती हैं, लेकिन शान्तिकुञ्ज के प्रतिपादन इस मामले में सफल क्यों रहे हैं?

उत्तर: युग-धर्म में नवीनता और विवादास्पद बातें होती हैं, जो लोगों के पूर्वाग्रहों से मेल नहीं खातीं, इसलिए उन्हें स्वीकारने में बुद्धि पर दबाव पड़ता है और लोग उनका विरोध करते हैं। शान्तिकुञ्ज के प्रतिपादन इसलिए सफल रहे हैं क्योंकि वे तर्क, तथ्य, प्रमाण और उदाहरणों पर आधारित हैं, और उनमें प्राण प्रक्रिया का समन्वय भी है। इस कारण लोग आश्चर्य तो करते हैं, पर उन्हें यथार्थ से विपरीत नहीं ठहरा पाते और अंततः उन्हें स्वीकार कर लेते हैं।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: "दुर्बुद्धि ही दुष्परिणाम उत्पन्न करती है, पर जब वह उलटकर सद्बुद्धि के रूप में बदल जाती है तो फिर परिस्थितियाँ सुधरने में भी देर नहीं लगती।" इस कथन का वर्तमान युग-परिवर्तन के संदर्भ में विश्लेषण करें।

उत्तर: यह कथन युग-परिवर्तन की मूल प्रक्रिया को समझाता है। पिछले दो हजार वर्षों के दुष्परिणामों का मूल कारण मनुष्य की "दुर्बुद्धि" या "उल्टी समझ" ही थी, जिसने उसे स्वार्थी, अनैतिक और विनाशकारी बनाया। अब युग-परिवर्तन के इस दौर में, नियन्ता की विशेष व्यवस्था से वही दुर्बुद्धि "सद्बुद्धि" में बदल रही है। लोग यह महसूस करने लगे हैं कि भलाई और सज्जनता का मार्ग ही वास्तविक सुख और शांति दे सकता है। जैसे ही यह वैचारिक परिवर्तन (सद्बुद्धि का उदय) होता है, बाहरी परिस्थितियों को सुधरने में देर नहीं लगती। यही कारण है कि लेखक को विश्वास है कि जो सुधार सदियों में होना था, वह एक शताब्दी में ही संभव हो जाएगा।

2. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज को एक "छोटे प्रवाह" के रूप में वर्णित किया गया है, फिर भी यह असाधारण परिवर्तन कैसे ला पा रहा है? इसके पीछे क्या 'अदृश्य' कारण हो सकते हैं?

उत्तर: शान्तिकुञ्ज साधनों की दृष्टि से एक "छोटा प्रवाह" है, लेकिन यह असाधारण परिवर्तन इसलिए ला पा रहा है क्योंकि इसके कार्यों के पीछे केवल भौतिक साधन नहीं, बल्कि एक अदृश्य आध्यात्मिक शक्ति या "प्राणशक्ति" काम कर रही है। इसके प्रतिपादन केवल बौद्धिक नहीं, बल्कि प्राणवान हैं जो सीधे व्यक्ति के अंतर्मन को प्रभावित करते हैं। निःशुल्क भोजन जैसी व्यवस्था यह दर्शाती है कि इसका उद्देश्य भौतिक लाभ कमाना नहीं, बल्कि निःस्वार्थ सेवा है, जो लोगों में विश्वास जगाता है। इसके परामर्श युग-धर्म के अनुरूप हैं और तर्क, तथ्य, प्रमाणों से पुष्ट हैं, जिससे बुद्धिवादी युग में भी लोग इन्हें स्वीकार कर रहे हैं। यह सब मिलकर एक ऐसा प्रभाव उत्पन्न करते हैं जो साधनों की कमी के बावजूद असाधारण परिणाम देता है, यह इंगित करता है कि कोई दैवी शक्ति इस प्रयास का समर्थन कर रही है।

अध्याय 5: प्रगति की दिशा में बढ़ते प्रयास

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: आजकल के समाज में बुद्धिमान किसे समझा जाता है?

उत्तर: आजकल के समाज में बुद्धिमान उसे समझा जाता है जिसने अनैतिक तरीकों से ही सही, पर बहुत सारा धन (विपुल वैभव) अर्जित कर लिया हो।

2. प्रश्न: लोग नीति-निष्ठा को व्यवहार में क्यों नहीं उतारते?

उत्तर: लोग इसे व्यवहार में इसलिए नहीं उतारते क्योंकि वे मानते हैं कि यह व्यावहारिक नहीं है और इसे अपनाने से घाटा उठाना पड़ेगा और वे दूसरों की नजर में बेवकूफ बन जाएँगे।

3. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज ने किस मान्यता को गलत सिद्ध किया है?

उत्तर: शान्तिकुञ्ज ने इस मान्यता को गलत सिद्ध किया है कि उत्कृष्टता और नीति-निष्ठा की नीति अव्यावहारिक और घाटे का सौदा है। उसने सिद्ध किया है कि इसी नीति से व्यक्ति का वास्तविक और स्थायी हित होता है।

4. प्रश्न: वकालत के पेशे का उदाहरण क्यों दिया गया है?

उत्तर: यह बताने के लिए कि तर्कों से दूसरों की मान्यता बदलना संभव है, जैसे वकील सही को गलत और गलत को सही सिद्ध करने का प्रयास करते हैं। लेकिन शान्तिकुञ्ज का कार्य इससे भिन्न है क्योंकि यहाँ लोग स्वेच्छा से अपनी भूल स्वीकार कर जीवन बदलते हैं।

5. प्रश्न: क्रान्तियाँ वस्तुतः कैसी होती हैं?

उत्तर: क्रान्तियाँ विवाद या शास्त्रार्थ पर आधारित नहीं होतीं। वे तब होती हैं जब बात व्यक्ति के अन्तराल की गहराई तक पहुँचकर उसकी मान्यता का हिस्सा बन जाती है और वह उसे जीवन में उतार लेता है।

6. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज की विचारधारा ने दुराग्रही और स्वार्थी लोगों को भी क्या मानने के लिए बाध्य किया है?

उत्तर: इसने उन्हें यह मानने के लिए बाध्य किया है कि विजय अंततः सत्य की ही होती है और झूठ के पैर नहीं होते।

7. प्रश्न: इक्कीसवीं शताब्दी को किसकी विशिष्टता की अवधि बताया गया है?

उत्तर: इक्कीसवीं शताब्दी को नारी-विशिष्टता की अवधि बताया गया है।

8. प्रश्न: नारी-प्रगति के क्षेत्र में क्या अनोखा चमत्कार देखने को मिल रहा है?

उत्तर: अनोखा चमत्कार यह है कि अशिक्षित स्तर के नारी-समुदाय ने भी नवयुग के संदेश को स्वीकार कर लिया है और वे प्रगति-पथ पर चलने का निश्चय कर रही हैं। वे प्रौढ़ शिक्षा में रुचि ले रही हैं और घूँघट-परदा जैसी कुप्रथाओं को छोड़ रही हैं।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज द्वारा प्रतिपादित विचारधारा प्रचलित मान्यताओं के विरुद्ध होते हुए भी सफल क्यों हो रही है?

उत्तर: यह विचारधारा इसलिए सफल हो रही है क्योंकि यह केवल बौद्धिक प्रतिपादन नहीं है, बल्कि इसके साथ प्राण प्रक्रिया का समन्वय भी जुड़ा हुआ है। यह तर्क, तथ्य और प्रमाणों पर आधारित है, जिससे बुद्धिवादी युग के लोग भी इसे स्वीकारने के लिए बाध्य होते हैं। इसके अलावा, यह लोगों के जीवन में व्यावहारिक और सकारात्मक परिवर्तन लाकर यह सिद्ध कर रही है कि आदर्शवादिता ही अंततः लाभदायक है। यह बात लोगों के अन्तराल तक पहुँचती है और वे अपनी पुरानी मान्यताएँ बदल लेते हैं।

2. प्रश्न: "झूठ के पैर नहीं होते।" इस कहावत को शान्तिकुञ्ज की विचारधारा कैसे सिद्ध कर रही है?

उत्तर: यह विचारधारा सिद्ध कर रही है कि भले ही आज के समय में असत्य और अनैतिकता से लाभ कमाना आसान और प्रचलित लगता हो, लेकिन यह स्थायी नहीं है। शान्तिकुञ्ज यह स्थापित कर रहा है कि अन्ततः सत्य और नीति-निष्ठा की ही विजय होती है। जब लोग अपने जीवन में इस सिद्धांत को अपनाकर वास्तविक और स्थायी हित प्राप्त करते हैं, तो वे स्वयं अनुभव करते हैं कि झूठ और अनीति पर आधारित सफलता क्षणिक होती है और उसे सच्ची या हार्दिक मान्यता कभी नहीं मिलती।

3. प्रश्न: नारी-प्रगति के संबंध में लेखक को ऐसा क्यों लगता है कि "इस प्रयास के पीछे कोई अदृश्य शक्ति काम कर रही है"?

उत्तर: लेखक को ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि नारी-प्रगति उस स्तर पर हो रही है जहाँ बड़े-बड़े प्रयास और आग्रह भी पहले असफल हो जाते थे। विशेष रूप से अशिक्षित और प्रौढ़ महिलाओं में शिक्षा और सामाजिक कुप्रथाओं (जैसे घूँघट) को छोड़ने की जो स्वतःस्फूर्त लहर चल पड़ी है, वह सामान्य प्रयासों का परिणाम नहीं लगती। यह परिवर्तन इतना व्यापक और तीव्र है कि यह किसी दैवी या अदृश्य शक्ति की प्रेरणा का संकेत देता है जो समाज को एक निश्चित लक्ष्य (नर-नारी समानता) की ओर ले जा रही है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: युग-परिवर्तन की प्रक्रिया में 'बौद्धिक प्रतिपादन' और 'प्राण प्रक्रिया' का समन्वय क्यों अनिवार्य है? अध्याय के आधार पर विश्लेषण करें।

उत्तर: यह समन्वय अनिवार्य है क्योंकि आज का युग बुद्धिवादी है, जहाँ किसी भी बात को स्वीकार करने के लिए तर्क, तथ्य और प्रमाण की आवश्यकता होती है। केवल भावनात्मक या आध्यात्मिक उपदेशों से काम नहीं चलता। 'बौद्धिक प्रतिपादन' लोगों के मस्तिष्क को संतुष्ट करता है और उन्हें सोचने पर विवश करता है। लेकिन केवल बुद्धि से सहमत हो जाना ही पर्याप्त नहीं है, क्योंकि लोग अक्सर उन बातों को व्यवहार में नहीं उतारते

जो उनके स्वार्थ के विरुद्ध हों। यहीं पर 'प्राण प्रक्रिया' की भूमिका आती है। यह विचारों को इतनी शक्ति देती है कि वे व्यक्ति के अंतःकरण में गहराई तक उतरकर उसकी मान्यता और स्वभाव का हिस्सा बन जाएँ। इस समन्वय के बिना, विचार केवल जानकारी बनकर रह जाते हैं, क्रान्ति नहीं बनते। शान्तिकुञ्ज की सफलता का रहस्य इसी समन्वय में निहित है।

2. प्रश्न: वर्तमान समाज 'नीति-निष्ठा' को अव्यावहारिक क्यों मानता है? शान्तिकुञ्ज इस गहरी जड़ जमा चुकी मान्यता को बदलने के लिए क्या रणनीति अपना रहा है?

उत्तर: वर्तमान समाज 'नीति-निष्ठा' को अव्यावहारिक इसलिए मानता है क्योंकि उसे अपने चारों ओर अनीति और चालाकी से सफल होने वालों के अनगिनत उदाहरण दिखते हैं, जबकि नीति पर चलने वालों को वह घाटे में और बेवकूफ समझता है। यह 'प्रत्यक्ष' अनुभव उसकी मान्यता को दृढ़ करता है। इस मान्यता को बदलने के लिए शान्तिकुञ्ज एक दोहरी रणनीति अपना रहा है:

1. तार्किक खंडन: वह ऐसी "सिद्धान्त शैली और तर्क प्रक्रिया" प्रस्तुत करता है जो प्रचलित मान्यताओं को बौद्धिक स्तर पर चुनौती देती है और यह सिद्ध करती है कि अंततः सत्य की ही जीत होती है।

2. व्यावहारिक प्रमाण: वह अपने अनुयायियों के जीवन में नीति-निष्ठा को उतारकर यह प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है कि उत्कृष्टता की नीति ही वास्तव में स्थायी और वास्तविक लाभ देती है। जब लोग अपने और अपने संपर्क क्षेत्र में इसके सकारात्मक परिणाम देखते हैं, तो उनकी पुरानी, जमी हुई मान्यता टूटने लगती है और वे नए आदर्शों को व्यावहारिक मानने लगते हैं।

अध्याय 6: प्रस्तुत समस्याएँ सुलझने ही जा रही हैं

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: पुराने समय में घर-घर में कौन-से अंधविश्वास फैले हुए थे?

उत्तर: पुराने समय में भूत-प्रेत, टोना-टोटका, जन्तर-मन्तर और जादू कराने जैसे अंधविश्वास घर-घर में फैले हुए थे।

2. प्रश्न: ये पुराने अंधविश्वास अब कहाँ चले गए हैं?

उत्तर: ये अंधविश्वास समझदारी का उद्भव होते ही इस प्रकार गायब हो गए मानो कभी थे ही नहीं।

3. प्रश्न: बीमारियों की जड़ वास्तव में कहाँ रहती है?

उत्तर: बीमारियों की जड़ शरीर के बजाय मन के भीतर रहती है। यदि मन को नियंत्रित और सद्भावपूर्ण रखा जाए तो शरीर स्वस्थ रहता है।

4. प्रश्न: खिन्नता और उद्विग्नता का मुख्य कारण क्या है?

उत्तर: खिन्नता और उद्विग्नता का मुख्य कारण प्रतिकूल परिस्थितियाँ नहीं, बल्कि व्यक्ति के चित्त की प्रवृत्तियाँ और मन का बेतुकापन है।

5. प्रश्न: अधिकांश समस्याएँ केवल संयम-साधना से कैसे सुलझ सकती थीं?

उत्तर: यदि मनुष्य अपनी इन्द्रियों, जैसे स्वादेन्द्रिय और कामुकता पर संयम रखता, तो अनावश्यक इच्छाओं की दौड़-धूप न करनी पड़ती और उनसे जुड़ी अधिकांश समस्याएँ अपने आप सुलझ जातीं।

6. प्रश्न: कामुकता को लेखक ने क्या माना है?

उत्तर: लेखक ने कामुकता को शारीरिक आवश्यकता या मांग नहीं, बल्कि एक मानसिक विकार माना है।

7. प्रश्न: मनुष्य की बुद्धिमानी का प्रथम चिह्न क्या है?

उत्तर: उपलब्ध वस्तुओं का ठीक प्रकार से उपयोग करना ही मनुष्य की बुद्धिमानी का प्रथम चिह्न है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: लेखक ने भूत-प्रेत के अंधविश्वास के गायब होने का उदाहरण क्यों दिया है? वह इसके माध्यम से क्या समझाना चाहते हैं?

उत्तर: लेखक ने यह उदाहरण यह समझाने के लिए दिया है कि जैसे समझदारी आने पर भूत-प्रेत जैसे गहरे जमे अंधविश्वास पूरी तरह समाप्त हो गए, ठीक उसी तरह वर्तमान की अनेक जटिल लगने वाली समस्याएँ भी समझदारी (सही चिंतन) आने पर समाप्त हो जाएँगी। वह बताना चाहते हैं कि हमारी आज की शारीरिक, मानसिक और सामाजिक समस्याएँ भी एक प्रकार की भ्रांतियाँ या 'नासमझी' ही हैं, जिनकी जड़ हमारे गलत चिंतन में है। जैसे ही चिंतन सही होगा, ये समस्याएँ भी गायब हो जाएँगी।

2. प्रश्न: "अपनी गलती को दूसरों के सिर इसीलिए मढ़ा जाता है।" इस कथन का क्या आशय है? लोग ऐसा क्यों करते हैं?

उत्तर: इस कथन का आशय है कि मनुष्य अपनी खिन्नता, उद्विग्नता और असफलताओं का कारण बाहरी परिस्थितियों या दूसरे लोगों को मानता है, जबकि वास्तविक कारण उसके अपने मन की गलत प्रवृत्तियाँ और चिंतन होता है। लोग ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि अपने अंदर की गलती को स्वीकार करने और उसे सुधारने की अपेक्षा बाहरी परिस्थितियों को दोष देना आसान होता है। अपनी कुटुंबों और गलत अभ्यासों को देखे बिना, वे दूसरों पर दोष मढ़कर अपनी जिम्मेदारी से बचना चाहते हैं।

3. प्रश्न: लेखक के अनुसार, संसार में एक भी कठिनाई क्यों नहीं है जिसका समाधान न हो? समाधान का मूल मंत्र क्या है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, यह संसार भगवान का बनाया हुआ एक सुरम्य उद्यान है जिसमें हर प्रकार की सुविधाएँ भरी पड़ी हैं। इसलिए, यहाँ ऐसी कोई कठिनाई नहीं है जिसका समाधान न हो सके। समाधान का

मूल मंत्र है 'बुद्धिमत्ता अपनाना' और अपने 'चिंतन को सही करना'। जहाँ भी प्रतिकूलता या समस्या दिखती है, उसका वास्तविक कारण बाहरी नहीं, बल्कि हमारे चिंतन की कोई गड़बड़ी या खोट ही होता है। यदि हम उस मूल कारण (गलत चिंतन) को ढूँढकर ठीक कर लें, तो हर समस्या का समाधान संभव है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: अध्याय के अनुसार, मनुष्य की लगभग सभी समस्याओं (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक) का मूल कारण एक ही है। वह मूल कारण क्या है और उसे कैसे दूर किया जा सकता है?

उत्तर: अध्याय के अनुसार, मनुष्य की लगभग सभी समस्याओं का एकमात्र मूल कारण है 'मन का दुरुपयोग' या 'गलत चिंतन'। शारीरिक बीमारियाँ मन के नियंत्रण में न होने से होती हैं। मानसिक खिन्नता और चिंता परिस्थितियों के कारण नहीं, बल्कि मन की गलत प्रवृत्तियों के कारण होती है। सामाजिक विग्रह और अनाचार भी इन्द्रियों पर नियंत्रण न होने (जो कि मन का ही एक कार्य है) और गलत चिंतन के कारण होते हैं। इसे दूर करने का उपाय है 'मन का सदुपयोग' करना। यदि मनुष्य मन को सबसे अच्छा साधन मानकर उसे सरल, सौम्य, सद्भावपूर्ण और संयमित रखना सीख ले, तो उसकी सभी समस्याएँ अपने आप सुलझ सकती हैं। चिंतन को सही दिशा देना ही सभी समस्याओं के समाधान की कुंजी है।

2. प्रश्न: "यह संसार भगवान का सुरम्य उद्यान है।" इस दार्शनिक मान्यता का हमारे दैनिक जीवन की समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण पर क्या प्रभाव पड़ सकता है?

उत्तर: यह दार्शनिक मान्यता हमारे दृष्टिकोण में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है। यदि हम यह मान लें कि यह संसार मूल रूप से एक 'सुरम्य उद्यान' है, तो हम समस्याओं को स्वाभाविक या स्थायी नहीं मानेंगे।

◦ जिम्मेदारी का भाव: हमारा दृष्टिकोण 'शिकायत' करने के बजाय 'जिम्मेदारी' लेने वाला बन जाएगा। हम यह समझेंगे कि यदि उद्यान में कहीं कांटे (समस्याएँ) दिख रहे हैं, तो इसका कारण उद्यान नहीं, बल्कि हमारे 'चिंतन में पड़ी कोई गड़बड़ी' है।

◦ आंतरिक समाधान पर जोर: हम समस्याओं के समाधान के लिए बाहर भाग-दौड़ करने की अपेक्षा अपने भीतर, अपने चिंतन और अपनी आदतों में सुधार करने पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

◦ आशावाद: यह विश्वास हमें आशावादी बनाएगा कि हर समस्या का समाधान संभव है, क्योंकि संसार का मूल स्वरूप सुखद और सुविधापूर्ण है। हम निराशा और हताशा से बचेंगे और बुद्धिमत्तापूर्वक समाधान खोजने के लिए प्रेरित होंगे। संक्षेप में, यह मान्यता हमें पीड़ित (victim) की मानसिकता से निकालकर निर्माता (creator) की मानसिकता में ले आएगी।

अध्याय 7: युगान्तरीय चेतना का आलोक-विस्तार

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: युगसन्धि का समय (1990-2000) किस कार्य के लिए बताया गया है?

उत्तर: यह दस वर्ष का समय बीज जोतने, बोने, उगाने, खाद-पानी डालने और रखवाली करने का है।

2. प्रश्न: इक्कीसवीं सदी में कैसे परिवर्तन होंगे?

उत्तर: इक्कीसवीं सदी में इतने बड़े और आश्चर्यजनक परिवर्तन होंगे कि लोगों को लगेगा जैसे युग ही बदल गया है और सतयुग की वापसी हो गई है।

3. प्रश्न: अबकी बार परिवर्तन की गति कैसी है?

उत्तर: अबकी बार परिवर्तन का प्रवाह तूफानी गति से आया है और जो कार्य दो हजार वर्षों में होता, वह मात्र सौ वर्षों में पूरा होने जा रहा है।

4. प्रश्न: युगसन्धि की उथल-पुथल में किसकी बड़ी भूमिका होगी?

उत्तर: इसमें मानवीय प्रयासों के अलावा दैवी शक्ति की बड़ी भूमिका होगी।

5. प्रश्न: नर-रत्न किन्हें कहा जाएगा?

उत्तर: नर-पशु और नर-पिशाच जैसा जीवन जीने वालों में से जो दिव्य प्रतिभा-सम्पन्न लोग निकलेंगे, जिनका चिंतन, चरित्र और व्यवहार दूसरों को प्रभावित करेगा, उन्हें नर-रत्न कहा जाएगा।

6. प्रश्न: युगसन्धि महापुरश्चरण का मोटा आध्यात्मिक स्वरूप क्या होगा?

उत्तर: इसका मोटा आध्यात्मिक स्वरूप जप, यज्ञ और ध्यान होगा।

7. प्रश्न: महायज्ञ के यजमान कौन होंगे?

उत्तर: वे लोग महायज्ञ के यजमान होंगे जो अगले पाँच वर्षों तक नियमित रूप से साप्ताहिक सत्संगों का आयोजन करेंगे, जिसमें दीपयज्ञ, कीर्तन, प्रवचन और युगसाहित्य का स्वाध्याय शामिल होगा।

8. प्रश्न: युगान्तरीय चेतना का आलोक विश्व के कोने-कोने में कैसे पहुँचेगा?

उत्तर: यह आलोक अगले दस वर्षों में वाणी और लेखनी (युगसाहित्य) के माध्यम से होने वाले प्रचार-कार्य द्वारा विश्व के कोने-कोने में पहुँचेगा।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: लेखक ने छोटे बीज और शिलान्यास का उदाहरण देकर क्या समझाया है?

उत्तर: लेखक ने यह समझाने के लिए उदाहरण दिया है कि जैसे छोटा बीज भविष्य में विशाल वृक्ष और छोटा शिलान्यास एक भव्य भवन बन जाता है, उसी प्रकार युगसन्धि के समय में जो प्रयास अभी छोटे दिख रहे हैं, वे भविष्य में (इक्कीसवीं सदी में) बहुत विशाल और प्रभावशाली रूप ले लेंगे। अभी का समय नींव रखने या बीज

बोने का है, जिसका फल पूरी अगली शताब्दी में मिलेगा।

2. प्रश्न: शान्तिकुञ्ज के पाँच दिवसीय शिक्षण-सत्र को सामान्य प्रशिक्षणों से भिन्न और चमत्कारी क्यों कहा गया है?

उत्तर: इसे भिन्न और चमत्कारी इसलिए कहा गया है क्योंकि सामान्य प्रशिक्षणों में केवल ज्ञानेन्द्रियों (कान, नाक, आँख) के माध्यम से जानकारी मस्तिष्क तक पहुँचती है जो अस्थायी होती है। परन्तु शान्तिकुञ्ज के सत्रों में शब्दों के आदान-प्रदान के साथ-साथ प्राणशक्ति भी जुड़ी होगी, जिसका प्रभाव चिरकाल तक स्थिर रहेगा और व्यक्ति के जीवन में अद्भुत परिवर्तन लाएगा।

3. प्रश्न: महायज्ञ की योजना (1995 और 2000) का उद्देश्य क्या प्रतीत होता है? यह केवल एक कर्मकांड है या इससे कुछ बड़ा लक्ष्य साधा जा रहा है?

उत्तर: यह केवल एक कर्मकांड नहीं है। इसका उद्देश्य बहुत बड़ा है। इसका मुख्य लक्ष्य नवयुग के संदेश को जन-जन तक पहुँचाने के लिए एक संगठित और अनुशासित नेटवर्क तैयार करना है। साप्ताहिक सत्संग, स्वाध्याय आदि के माध्यम से लोगों को वैचारिक रूप से प्रशिक्षित करना और उन्हें एक लक्ष्य के लिए जोड़ना है। दो करोड़ देव-मानवों को सम्मिलित करने का लक्ष्य यह दर्शाता है कि यह एक व्यापक जन-आंदोलन की तैयारी है, जिसका उद्देश्य युगान्तरीय चेतना को विश्व भर में फैलाना है। यज्ञ एक आध्यात्मिक ऊर्जा केंद्र और सामूहिक संकल्प का प्रतीक है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: "जिनकी दृष्टि मोटी है, उनके लिए तो जमीन-आसमान सदा एक से रहते हैं।" इस कथन के माध्यम से लेखक युग-परिवर्तन को समझने के लिए किस प्रकार की दृष्टि की आवश्यकता पर बल दे रहे हैं?

उत्तर: इस कथन के माध्यम से लेखक सूक्ष्म दृष्टि की आवश्यकता पर बल दे रहे हैं। वे कहना चाहते हैं कि युग-परिवर्तन जैसे बड़े और गहरे बदलाव सतह पर तुरंत दिखाई नहीं देते। जिनकी दृष्टि मोटी या सतही होती है, वे केवल बाहरी और स्थूल चीजों को देखते हैं और उन्हें कोई परिवर्तन नजर नहीं आता। लेकिन जो व्यक्ति सूक्ष्मदर्शी होता है, वह विचारों, मान्यताओं, और चेतना के स्तर पर हो रहे गहरे परिवर्तनों को पहचान सकता है। वह समझ सकता है कि मनुष्य का शरीर भले ही वैसा ही है, लेकिन उसका मानस और दृष्टिकोण बदल रहा है, जो कि वास्तविक युग-परिवर्तन है। इसलिए, इन परिवर्तनों को देखने और समझने के लिए प्रज्ञावान या सूक्ष्मदर्शी होना आवश्यक है।

2. प्रश्न: इस अध्याय में 'दैवी शक्ति' की भूमिका पर बार-बार जोर क्यों दिया गया है? क्या इसका अर्थ यह है कि मानवीय प्रयास निरर्थक हैं?

उत्तर: 'दैवी शक्ति' पर जोर इसलिए दिया गया है क्योंकि लेखक के अनुसार, होने वाले परिवर्तन इतने विशाल

और तीव्र हैं कि वे केवल मानवीय प्रयासों से संभव नहीं हैं। दो हजार वर्षों की गड़बड़ियों को सौ साल में सुधारना एक अभूतपूर्व कार्य है। दैवी शक्ति इस प्रक्रिया को गति देने, मार्गदर्शन करने और आवश्यक ऊर्जा प्रदान करने के लिए हस्तक्षेप कर रही है। इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि मानवीय प्रयास निरर्थक हैं। बल्कि, दैवी शक्ति मानवीय प्रयासों को ही अपना माध्यम बना रही है। जप, यज्ञ, सत्संग, स्वाध्याय, और प्रचार-प्रसार जैसे सभी कार्य मनुष्य ही करेंगे। दैवी शक्ति उन प्रयासों को असाधारण रूप से प्रभावी और सफल बनाएगी। अतः, यह मनुष्य और दैवी शक्ति के संयुक्त प्रयास का आह्वान है, जिसमें मनुष्य निमित्त मात्र है।

अध्याय 8: अगले दिनों जो करना है

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: सूत्र-संचालक (लेखक) के जीवन का प्रथम अध्याय कैसा रहा?

उत्तर: उनका जीवन का प्रथम अध्याय गर्व, गौरव, आनन्द और उल्लास का अनुभव कराने वाला रहा, जिसमें उन्होंने सौंपे गए कार्य को क्रमबद्ध रूप से पूरा किया।

2. प्रश्न: सूत्र-संचालक ने अपनी जीवनचर्या द्वारा क्या सिद्ध किया?

उत्तर: उन्होंने सिद्ध किया कि आदर्शों पर चलना सरल, सुखद और सभी के लिए सुलभ है, और आध्यात्मिक जीवन कठिन नहीं है।

3. प्रश्न: सूत्र-संचालक के जीवन के प्रथम अध्याय के कुछ प्रमुख कार्य क्या थे?

उत्तर: प्रमुख कार्य थे - साधना द्वारा आत्मपरिमार्जन, युगसाहित्य का सृजन, लाखों का संगठन, और विचारक्रान्ति का सूत्र-संचालन।

4. प्रश्न: सूत्र-संचालक के जीवन का दूसरा अध्याय कब से और कैसे प्रारम्भ हो रहा है?

उत्तर: दूसरा अध्याय सन् 1990 के वसन्तपर्व से प्रारम्भ हो रहा है और इसमें वे स्थूल शरीर के बजाय अपने सूक्ष्म व कारण-शरीरों का प्रयोग करेंगे।

5. प्रश्न: सूक्ष्म और कारण-शरीर स्थूल-शरीर की तुलना में कैसे होते हैं?

उत्तर: वे स्थूल-शरीर की तुलना में असंख्य गुना अधिक शक्तिशाली होते हैं।

6. प्रश्न: सूक्ष्म-शरीर का कार्य क्या होगा?

उत्तर: सूक्ष्म-शरीर का कार्य युगचेतना का विस्तार भारत और विदेशों में करना तथा आवश्यक आध्यात्मिक साधना और रचनात्मक क्रियाकलाप का विस्तार करना होगा।

7. प्रश्न: कारण-शरीर की क्या विशेषता है?

उत्तर: कारण-शरीर की शक्ति बहुत बड़ी है, वह अदृश्य जगत में हस्तक्षेप कर सकता है और ब्राह्मीचेतना से

जुड़कर अद्भुत व अलौकिक कार्य कर सकता है।

8. प्रश्न: इक्कीसवीं सदी के परिवर्तन कौन करेगा और वे कैसे प्रतीत होंगे?

उत्तर: इक्कीसवीं सदी के परिवर्तन ब्राह्मीचेतना से जुड़ा कारण-शरीर करेगा, पर यह प्रतीत नहीं होगा कि यह कैसे हो रहा है और कौन कर रहा है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: सूत्र-संचालक ने प्रत्यक्ष मिलने-जुलने का क्रम बन्द करने का निश्चय क्यों किया?

उत्तर: उन्होंने यह निश्चय इसलिए किया क्योंकि स्थूल-शरीर की विधि-व्यवस्था में बहुत समय खर्च हो जाता है, जबकि आने वाले महत्वपूर्ण कार्यों के लिए चेतना-स्तर पर काम करना आवश्यक है। सूक्ष्म व कारण-शरीर बिना किसी झंझट के व्यापक क्षेत्र में तेजी से काम कर सकते हैं। जैसे कोई वैज्ञानिक या दार्शनिक महत्वपूर्ण बौद्धिक कार्य के लिए स्थूल संपर्क समेट लेता है, उसी तरह इन महान आध्यात्मिक कार्यों के लिए यह और भी आवश्यक था।

2. प्रश्न: "अदृश्य से ही दृश्य गतिविधियाँ प्रकट होंगी।" इस वाक्य का क्या तात्पर्य है?

उत्तर: इसका तात्पर्य है कि इक्कीसवीं सदी में जो भी बड़े-बड़े सकारात्मक परिवर्तन और सुधार दिखाई देंगे, उनकी योजना और शक्ति का स्रोत अदृश्य जगत होगा। ये परिवर्तन किसी सामान्य व्यक्ति या संगठन के प्रयासों का फल नहीं दिखेंगे, बल्कि ऐसा लगेगा कि वे स्वतः हो रहे हैं। वास्तव में, इनके पीछे सूत्र-संचालक का कारण-शरीर और ब्राह्मीचेतना काम कर रही होगी, जो अदृश्य रहकर ही दृश्य जगत को प्रभावित करेगी।

3. प्रश्न: स्थूल, सूक्ष्म और कारण-शरीर की भूमिकाओं में क्या अंतर बताया गया है?

उत्तर:

- **स्थूल-शरीर:** यह दृश्यमान स्वरूप है, जो प्रत्यक्ष गतिविधियों जैसे साहित्य सृजन, संगठन निर्माण आदि का कार्य करता है। इसकी सीमाएं होती हैं और इसमें समय अधिक लगता है।

- **सूक्ष्म-शरीर:** यह स्थूल-शरीर से अधिक शक्तिशाली है और व्यापक क्षेत्र में तेजी से काम कर सकता है। इसका कार्य चेतना का विस्तार और आध्यात्मिक-रचनात्मक क्रियाकलापों को गति देना है।

- **कारण-शरीर:** यह सबसे शक्तिशाली है। यह ब्राह्मीचेतना से जुड़कर अदृश्य जगत में हस्तक्षेप करता है और ऐसे अलौकिक कार्य करता है जो स्थूल या सूक्ष्म शरीर से संभव नहीं हैं। युग-परिवर्तन का मुख्य कार्य इसी के द्वारा संपन्न होगा।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: सूत्र-संचालक अपने जीवन को दो अध्यायों में क्यों विभाजित कर रहे हैं? यह विभाजन उनके मिशन की रणनीति के बारे में क्या बताता है?

उत्तर: यह विभाजन उनके मिशन की एक सोची-समझी रणनीति को दर्शाता है।

◦ प्रथम अध्याय (स्थूल-शरीर): यह 'बीजारोपण' का चरण था। इसमें उन्होंने दृश्यमान रहकर एक आधार तैयार किया—विचार (युगसाहित्य), संगठन (लाखों परिजन), और एक आदर्श (स्वयं का जीवन) प्रस्तुत किया। यह आवश्यक था ताकि लोगों को एक ठोस और अनुकरणीय मॉडल मिल सके।

◦ द्वितीय अध्याय (सूक्ष्म/कारण-शरीर): यह 'विस्तार' का चरण है। अब जब आधार तैयार हो चुका है, तो कार्य को अभूतपूर्व गति और व्यापकता देने के लिए स्थूल-शरीर की सीमाओं से मुक्त होना आवश्यक है। सूक्ष्म और कारण-शरीर के माध्यम से वे एक ही समय में विश्वव्यापी स्तर पर चेतना को प्रभावित कर सकते हैं, जो स्थूल रूप से असंभव था। यह रणनीति दिखाती है कि पहले एक मजबूत नींव बनाई गई और फिर उस पर विशाल इमारत खड़ी करने के लिए अधिक शक्तिशाली और व्यापक माध्यम का उपयोग किया जा रहा है।

2. प्रश्न: "जो जानकारी परिजनों को नहीं है, वह समय आने पर विदित हो जाएगी। उसे इस कारण उजागर नहीं होने दिया गया है कि लोगों को पीछे खोजने के लिए भी तो कुछ बाकी रहना चाहिए।" इस कथन में क्या गहरा रहस्य छिपा है?

उत्तर: इस कथन में एक गहरा रहस्य और एक महत्वपूर्ण संदेश छिपा है।

◦ रहस्य: यह इंगित करता है कि सूत्र-संचालक के कार्य का एक बहुत बड़ा हिस्सा परोक्ष और गोपनीय रहा है, जो सामान्य समझ से परे है। यह उनके मिशन के आध्यात्मिक और दैवी आयाम की ओर संकेत करता है, जिसे शायद उस समय उजागर करना उचित नहीं था।

◦ संदेश: यह भविष्य की पीढ़ियों को 'खोज' और 'अनुसंधान' के लिए प्रेरित करता है। वे नहीं चाहते कि उनके अनुयायी केवल उन्हें आँख बंद करके मानें, बल्कि वे चाहते हैं कि लोग स्वयं साधना करें, चिंतन करें और उन गहरे सत्यों को 'खोजें' जो उन्होंने अपने जीवन में स्थापित किए। यह एक गुरु का अपने शिष्यों को केवल उत्तर देने के बजाय, स्वयं उत्तर खोजने की क्षमता विकसित करने का आह्वान है। इससे मिशन जीवंत बना रहता है और केवल एक व्यक्ति पर केंद्रित होकर समाप्त नहीं हो जाता।

अध्याय 9: युग-अवतरण की प्रक्रिया

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक ने मनुष्य की तुलना कुएँ के मेढक या गूलर के कीड़े से कब की है?

उत्तर: जब मनुष्य की सोच केवल अपने स्वार्थ, विलास और अहंकार तक सीमित हो जाती है, तब उसकी तुलना कुएँ के मेढक या गूलर के कीड़े से की गई है।

2. प्रश्न: नरक का साम्राज्य या कलियुग कब आता है?

उत्तर: जब समाज में ऐसे लोगों का बाहुल्य हो जाता है जो केवल पेट और प्रजनन तक सीमित रहते हैं और मानवीय मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं, तब कलियुग आता है।

3. प्रश्न: इन दिनों की समस्याओं का एक ही कारण क्या बताया गया है?

उत्तर: एक ही कारण यह है कि मानवीय काया पर श्मशान के प्रेत (भ्रष्ट-चिन्तन और दुष्ट-आचरण) ने अधिकार जमा लिया है।

4. प्रश्न: नवयुग या सतयुग कैसे आएगा?

उत्तर: जब लोग अपने आपको बदलेंगे, स्वभाव में परिवर्तन करेंगे, और गिरने-गिराने की जगह उठने-उठाने की नीति अपनाएँगे, तब नवयुग आएगा।

5. प्रश्न: भगवान अपना कार्य किसके माध्यम से कराते हैं?

उत्तर: भगवान अपना कार्य किन्हीं महामानवों और देवदूतों के माध्यम से कराते हैं।

6. प्रश्न: मनुष्य-शरीर में प्रकट होने वाले प्रतिभावान देवदूतों की पहचान क्या होगी?

उत्तर: उनकी पहचान यह होगी कि वे अपने समय और साधनों का अधिकांश भाग परमार्थ-प्रयोजनों (प्रभु के काम) के लिए लगाएँगे और अपने लिए न्यूनतम खर्च करेंगे।

7. प्रश्न: अपने समय की सबसे बड़ी साधना, पुण्य-परमार्थ और धर्म-धारणा क्या है?

उत्तर: लोकमानस का परिष्कार (लोगों की सोच को सुधारना) ही अपने समय की सबसे बड़ी साधना, पुण्य-परमार्थ और धर्म-धारणा है।

8. प्रश्न: युग-अवतरण का श्रेय किसे मिलेगा?

उत्तर: युग-अवतरण का श्रेय उन्हीं को मिलेगा जो भगवान के काम (लोकमानस के परिष्कार) में लगे हैं। ऐसे लोग ही बड़भागी और सच्चे भक्त माने जाएँगे।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "हम जैसा बोते हैं, वैसा ही काटते भी तो हैं।" इस सिद्धांत को वर्तमान परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए कैसे प्रयोग किया गया है?

उत्तर: इस सिद्धांत का प्रयोग यह समझाने के लिए किया गया है कि आज समाज में जो भी दीनता-हीनता, संकट और समस्याएँ हैं, वे किसी बाहरी कारण से नहीं, बल्कि हमारे अपने ही कर्मों का फल हैं। हमने भ्रष्ट-चिन्तन और दुष्ट-आचरण का बीज 'बोया' है, इसलिए अब हम कष्ट और दुर्गति की फसल 'काट' रहे हैं। यह विश्लेषण जिम्मेदारी को बाहर से हटाकर स्वयं व्यक्ति और समाज पर डालता है और यह स्पष्ट करता है कि परिस्थितियाँ बदलने के लिए पहले अपने कर्म (सोच और आचरण) बदलने होंगे।

2. प्रश्न: 'नर-पशु' और 'देवमानव' में क्या मौलिक अंतर है?

उत्तर: मौलिक अंतर चेतना के स्तर और जीवन के उद्देश्य का है।

◦ **नर-पशु:** इसकी चेतना केवल 'स्व' तक (स्वार्थ, पेट, प्रजनन, अहंकार) सीमित होती है। वह अपने सभी साधन (समय, उपार्जन) केवल अपने ऊपर ही खर्च करता है।

◦ **देवमानव:** इसकी चेतना 'परमार्थ' या 'लोक-मंगल' पर केंद्रित होती है। वह अपने उपार्जन और समय का न्यूनतम भाग अपने लिए रखकर शेष को भगवान के काम, यानी लोकमानस के परिष्कार के लिए लगा देता है। संक्षेप में, नर-पशु लेता है, जबकि देवमानव देता है।

3. प्रश्न: "समय बदल रहा है: रात्रि का पलायन और प्रभात का उदय हो रहा है।" इस रूपक का क्या अर्थ है?

उत्तर: यह एक शक्तिशाली रूपक है जो युग-परिवर्तन की प्रक्रिया को दर्शाता है।

◦ **रात्रि का पलायन:** 'रात्रि' अज्ञान, स्वार्थ, भ्रष्ट-चिन्तन और दुष्ट-आचरण के अंधकार का प्रतीक है, जो पिछले काफी समय से छाया हुआ था। इसका पलायन मतलब इन नकारात्मक प्रवृत्तियों का अंत हो रहा है।

◦ **प्रभात का उदय:** 'प्रभात' ज्ञान, परमार्थ, सद्-चिन्तन और उत्थान के प्रकाश का प्रतीक है। इसका उदय होना मतलब नवयुग या सतयुग का आगमन हो रहा है, जिसमें लोग उठने और उठाने की रीति-नीति अपनाएँगे। यह रूपक एक आशावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है कि अंधकार का दौर समाप्त हो रहा है और एक उज्ज्वल भविष्य निकट है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: "लोकमानस का परिष्कार" को ही इस युग की सबसे बड़ी साधना और धर्म क्यों कहा गया है?

उत्तर: इसे सबसे बड़ी साधना और धर्म इसलिए कहा गया है क्योंकि लेखक के अनुसार, सभी समस्याओं की जड़ व्यक्ति के चिंतन (मानस) में है। समाज में जो भी अनाचार, संकट या पतन है, वह भ्रष्ट चिंतन का ही परिणाम है। जब तक लोगों की सोच नहीं बदलेगी, तब तक कोई भी बाहरी सुधार (जैसे कानून बदलना, व्यवस्था बदलना) स्थायी नहीं हो सकता। इसलिए, समस्या के मूल कारण पर प्रहार करना, यानी लोगों की सोच को स्वार्थ से परमार्थ की ओर, पतन से उत्थान की ओर मोड़ना ही सबसे मौलिक और प्रभावशाली कार्य है। यही वास्तविक धर्म है क्योंकि इससे ही भगवान का उद्देश्य (एक सुव्यवस्थित सृष्टि) पूरा होता है। इसलिए, इस कार्य में लगने वाला ही सच्चा साधक और भक्त है।

2. प्रश्न: इस अध्याय के अनुसार, भगवान और मनुष्य के बीच युग-परिवर्तन में क्या संबंध है? क्या भगवान सब कुछ स्वयं करते हैं या मनुष्य की कोई भूमिका है?

उत्तर: इस अध्याय के अनुसार, भगवान और मनुष्य के बीच एक सहयोगात्मक संबंध है। भगवान सब कुछ स्वयं नहीं करते, बल्कि वे अपनी इच्छा को मनुष्यों के माध्यम से ही पूरा करते हैं।

◦ **भगवान की भूमिका:** भगवान प्रेरणा, योजना और शक्ति के स्रोत हैं। वे महामानवों और देवदूतों का

अवतरण कराते हैं या चुनते हैं।

◦ **मनुष्य की भूमिका:** मनुष्य उस दैवी योजना को साकार करने के लिए माध्यम या 'उपकरण' बनता है। जो व्यक्ति अपने स्वार्थ को त्यागकर अपना समय और साधन 'लोकमानस के परिष्कार' जैसे ईश्वरीय कार्य में लगाता है, वही भगवान का चुना हुआ माध्यम (देवदूत) है। युग-अवतरण का श्रेय भी इन्हीं मनुष्यों को उपहारस्वरूप मिलता है। अतः, मनुष्य की भूमिका निष्क्रिय नहीं, बल्कि अत्यंत सक्रिय और महत्वपूर्ण है। भगवान कर्ता हैं, पर मनुष्य उनका 'करण' (instrument) है।

संकलित परिभाषाएँ

- **अन्धकारकाल** - पिछले दो हजार वर्षों की उस अवधि को "अन्धकारकाल" कहा गया है, जिसमें समर्थों ने असमर्थों को बहुत कष्ट दिया और अनीति-अनाचार ने अपनी सभी मर्यादाओं का उल्लंघन किया।
- **अवतार-परम्परा** - जब अनाचारी अपनी दुष्टता नहीं छोड़ते और सताए जाने वाले लोग भी प्रतिकार नहीं करते, जिससे सृष्टि की व्यवस्था लड़खड़ाने लगती है, तब स्रष्टा स्वयं उस असंतुलन को ठीक करने के लिए बागडोर अपने हाथ में लेता है। इसी को अवतार-परम्परा कहते हैं।
- **अपने समय की सबसे बड़ी गुत्थी** - ज्ञान-विज्ञान और सुविधा-साधनों की अधिकता होने के बावजूद हर व्यक्ति का खिन्न, उद्विग्न और विपन्न होना, क्योंकि उपलब्ध साधनों का सदुपयोग नहीं हो पा रहा है।
- **बुद्धिमत्ता का वास्तविक स्वरूप** - जो कुछ भी उपलब्ध है, उसका श्रेष्ठतम सदुपयोग कर पाना ही बुद्धिमत्ता का वास्तविक स्वरूप है।
- **मनुष्य की विशिष्टता** - संकटों से जूझने की शाश्वत सामर्थ्य ही मनुष्य की विशिष्टता है। वह अनीति से जीत भले ही न सके, पर उससे टक्कर ले सकता है।
- **सतयुग** - वह संतुलित अवसर या समय जब मनुष्य सही चाल, सही गति और सही रीति-नीति अपनाता था, मनुष्यों में आपसी स्नेह-सहयोग था और प्रकृति भी अनुकूल थी, उसे 'सतयुग' नाम दिया जाता है।
- **कलियुग** - वे परिस्थितियाँ जब समाज में अनाचार का प्रचलन बढ़ जाता है। या जब समाज में ऐसे लोगों की संख्या बढ़ जाती है जो केवल पेट और प्रजनन तक सीमित रहकर मानवीय मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं।
- **महाकाल** - दण्ड-प्रक्रिया का एक नाम, जो दुष्प्रवृत्तियों के प्रति प्रताड़नाओं की व्यवस्था करता है।
- **पाप का भागीदार** - अन्याय करने वाला, अन्याय के सामने सिर झुकाने वाला (उसे सहने वाला), और सब कुछ समझते हुए भी दूर से देखता रहने वाला (प्रतिरोध न करने वाला), तीनों ही समान रूप से पाप के भागीदार माने गए हैं।
- **सुयोग** - वह अवसर जब बहुत समय से चली आ रही गलती को जल्दी ही समझ लिया जाए और उसमें समय रहते सुधार कर लिया जाए।
- **सुधार की शताब्दी** - इक्कीसवीं सदी को सुधार की शताब्दी कहा गया है क्योंकि इसमें सामान्य गति से कई शताब्दियों में होने वाला सुधार केवल एक शताब्दी में ही हो जाएगा।
- **हजार समस्याओं का एक कारण** - उल्टी समझ ही हजार समस्याओं का एक कारण है।
- **बुद्धिमान (आज के समय में)** - वह व्यक्ति जिसने अनैतिक तरीकों से ही सही, पर बहुत सारा धन (विपुल वैभव) अर्जित कर लिया हो।
- **क्रान्तियाँ** - क्रान्तियाँ विवाद या शास्त्रार्थ पर आधारित नहीं होतीं, बल्कि तब होती हैं जब कोई बात व्यक्ति

के अन्तराल की गहराई तक पहुँचकर उसकी मान्यता का हिस्सा बन जाती है और वह उसे अपने जीवन में उतार लेता है।

- **कामुकता** - यह शारीरिक माँग या आवश्यकता नहीं, बल्कि एक मानसिक विकार है।
- **मनुष्य की बुद्धिमानी का प्रथम चिह्न** - उपलब्ध वस्तुओं को ठीक प्रकार से उपयोग करना ही मनुष्य की बुद्धिमानी का प्रथम चिह्न है।
- **नर-रत्न (या दिव्य प्रतिभा-सम्पन्न)** - नर-पशु और नर-पिशाच जैसा जीवन जीने वालों में से निकलने वाले वे लोग, जिनका चिंतन, चरित्र और व्यवहार दूसरों को प्रभावित करेगा।
- **नर-पशु** - वह व्यक्ति जिसकी सोच केवल अपने स्वार्थ, विलास और अहंकार तक सीमित हो और जो पेट तथा प्रजनन के दायरे में ही बँधा हो।
- **देवमानव** - वे लोग जिनकी प्रकृति अपने उपार्जन (साधनों) में से न्यूनतम अपने लिए खर्च करने और शेष को परमार्थ के कार्यों के लिए लगा देने की होती है।
- **अपने समय की सबसे बड़ी साधना, पुण्य-परमार्थ और धर्म-धारणा** - लोकमानस का परिष्कार करना (लोगों की सोच को सुधारना)।
- **नवयुग/सतयुग (आने वाला)** - वह समय जब लोग गिरने-गिराने की जगह उठने-उठाने की रीति-नीति अपनाएँगे और पतन के स्थान पर उत्थान का मार्ग ग्रहण करेंगे।